विश्वास और संदेह का रिश्तों पर प्रभाव

न्यायाधीश नगेन्द्र कुमार जैन
(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

मानव जीवन अकेले नहीं चल सकता। जन्म से मृत्यु तक मनुष्य रिश्तों के सहारे ही आगे बढ़ता है। माता–पिता, भाई–बहिन, पति–पत्नी, संतान, मित्र, पड़ौसी और सहकर्मी इन सभी रिश्तों को जोड़ने वाला अदृश्य सूत्र है–विश्वास। जब यह सूत्र मजबूत होता है, तो रिश्ते बोझ नहीं, बल्कि जीवन की शक्ति बन जाते है, परन्तु जब इसी स्थान पर सदेह प्रवेश कर लेता है तो वहीं रिश्ते तनाव, पीड़ा और संघर्ष का कारण बन जाते हैं।

विश्वास का मनोवैज्ञानिक महत्व–मनोविज्ञान के अनुसार विश्वास व्यक्ति को भावनात्मक सुरक्षा प्रदान करता है। जब किसी रिश्ते में विश्वास होता है तो व्यक्ति निडर होकर अपनी बात कर पाता है, अपनी कमजोरियां साझा कर सकता है और बिना भय के निर्णय ले सकता है।

विश्वास से – आत्मसम्मान बढ़ता है, मानसिक तनाव कम होता है, निर्णय क्षमता सुदृढ होती है, रिश्तों में स्थिरता आती है।

बच्चों के विकास में भी विश्वास की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, जिस परिवार में माता–पिता एक–दूसरे पर विश्वास करते हैं, वहां बच्चों में आत्मविश्वास, नैतिकता और संतुलित व्यक्तित्व विकसित होता है।

संदेह का मानसिक और भावनात्मक प्रभाव–संदेह व्यक्ति को भीतर से कमजोर कर देता है। संदेह करने वाला व्यक्ति स्वयं भी कभी शांत नहीं रह पाता। वह हर व्यवहार में छुपे अर्थ खोजता है, हर शब्द में चाल समझता है।

संदेह के कारण–निरंतर चिंता और भय, नींद और स्वास्थ्य पर प्रभाव, चिड़चिड़ापन और क्रोध, अवसाद और अकेलापन।

धीरे–धीरे संदेह रिश्ते को जांच–पड़ताल का केन्द्र बना देता है, जहाँ प्रेम की जगह पूछताछ और अपनापन की जगह निगरानी आ जाती है।

दाम्पत्य जीवन में विश्वास और संदेह–पति–पत्नी का रिश्ता सबसे अधिक संवेदनशील होता है। यहां विश्वास ही प्रेम, सम्मान और समर्पण का आधार बनता है।
जहां विश्वास होता है वहां छोटी गलतियाँ भी क्षमा बन जाती है।
जहाँ संदेह होता है वहां निर्दोष बात भी अपराध लगने लगती है।

दाम्पत्य में संदेह–संवाद को समाप्त करता है, शारीरिक और मानसिक दूरी बढ़ाता है, पारिवारिक कलह और विघटन का कारण बनता है।

अनेक परिवार केवल इसलिए टूट जाते है, क्योंकि बात करने के जाय मान लिया जाता है।

सामाजिक और कार्यस्थल के रिश्तों में प्रभाव–समाज और कार्यस्थल पर भी विश्वास सफलता की कुंजी है।

जहां विश्वास है, वहां टीम वर्क फलता–फूलता है।
जहां संदेह है, वहां प्रतिस्पर्द्धा शत्रुता में बदल जाती है।

किसी संस्था, समाज या राष्ट्र की प्रगति भी विश्वास पर ही निर्भर करती है। नागरिकों का व्यवस्था पर विश्वास और व्यवस्था का नागरिकों पर।

आतंकवाद और कटूता का जन्म अज्ञान, भय और आलगाव से होता है। जब कोई बच्चा बचपन से ही ‘‘दूसरा मेरा शत्रु नहीं मेरा

साथी है" यह सीख लेता है, तो उसके मन में नफरत की जमीन ही नहीं बनती।

सांस्कृतिक समावेश सीधे आतंक को नही मिटाता, पर यह उस मानसिकता को समाप्त करता है, जहाँ से आतंक जन्म लेता है।

अतः भारत की आत्मा सह–अस्तित्व में है, न कि एकरूपता में। हम सबको एक जैसा बनने की आवश्यकता नहीं, पर एक–दूसरे को समझाने और सम्मान देने की आवश्यकता अवश्य है।

यदि हम अपनी–अपनी आस्था को सुरक्षित रखते हुए दूसरों की संस्कृति को जानने का साहस करे, तो भारत केवल भौगोलिक रूप से नहीं भावनात्मक रूप से भी एक राष्ट्र बन सकेगा।

यह भावना राष्ट्र निर्माण की भावना है– इसे जितना अधिक संवाद और शिक्षा में स्थान मिलेगा, उतना ही हमारा समाज सशक्त और शांतिपूर्ण होगा।